Vol.12 April'19 No.9
Annual Subscription Rs 100
Rs. 10/- per copy

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

वेदोऽखिलो धर्ममूलम्

A Monthly publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

Brahmasha India Vedic Research Foundation
ब्रह्माशा इंडिया वैदिक रिसर्च फाउन्डेशन
C2A/58 Janakpuri, New Delhi - 110058

लिखना है तो.....

–संदीप सरस

कण्ठ गूँगा हो गया है शब्द बहरे हो गये हैं:
भाव की अभिव्यक्ति पर क्यों लाख पहरे हो गये हैं।
वेदना के गर्भ से ही जन्म कविता का हुआ है:
फिर कहो क्यों अश्रु पर प्रतिबन्ध गहरे हो गये हैं।
साध्य का हूँ दीप मैं तो, हूँ दिवस का मैं दिवाकर:
लेखनी इतिहास कितने लिख गई सान्निध्य पाकर।
शब्द हूँ मैं सत्य की अभिव्यक्ति करके ही रहूँगा:
युग लगा दे सैकड़ों प्रतिबन्ध चाहे भावना पर।।
सान्ध्य-दीप की आँखों में फिर अंशुमान लिखना होगा:
अब धरती की आञ्चल पर फिर आसमान लिखना होगा।
समय कठिन है बीते युग के पन्ने फिर फड़फड़ा उठे:
आज समय की छाती पर फिर वर्तमान लिखना होगा।।
लिखना है तो मौन हो चुके अधरों पर संवाद लिखो:
नयनों से झरनेवाले हर आँसू का अवसाद लिखो।
छिपी चीथड़ों में भूखी अन्तड़ियों की भाषा लिखना:
लिखना है तो दुखी हृदय की आहों का अनुवाद लिखो।

शंकर गञ्ज, बिसवाँ, सीतापुर (उ०प्र०)

जीवन सुख आधार

–रमेश बाबू शर्मा 'व्यस्त'

बिना शक्ति के भक्ति का, होता कब गुणगान।
दुर्बल बेचारा सदा, घुट सहता अपमान।।1।।
बुद्धिहीनता से मनुज, बना रहे लाचार।
पर-जीवी बनकर जिए, सहे नित्य दुत्कार।।2।।
पशुबल टिकता ही नहीं, बुद्धिबल जो जग सार।
मान दिलाता व्यक्ति को, केवल सद् व्यवहार।।3।।
कुमति गिराती व्यक्ति का, यश-वैभव-किरदार।
कलह निरन्तर बींधती, करती बंटाधार।।4।।
अविश्वास पल-पल बढ़े, मिले न शीतल छाँव।।5।।
शत्रु न करते तनिक भी, क्षमा दया न पनाह।
बिना शक्ति के हर मनुज रहता सदा तबाह।।6।।
घाटे के दुर्दिनों में, बढ़े क्लेश-विद्वेष।
केवल निज हित ताकना, करे ध्वस्त परिवेश।।7।।
साथ निभाते सुजन का, पाते सुख सन्तोष।
विग्रह जो पैदा करें, झेलें जन-आक्रोश।।8।।
मेल-जोल सद्भवना, सुमति प्रगति के द्वार।
'व्यस्त' कलाह दुर्भाव से, हो न कभी उद्धार।।9।।

Brahmarpan April'19 Vol. 12 No.9
चैत्र-बैशाख 2075-76 वि.संवत्

ब्रह्मार्पण
BRAHMARPAN

A bilingual Publication of Brahmasha India Vedic Research Foundation

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION

C2A/58, Janakpuri,
New Delhi-110058
Tel :- 25525128, 9313749812
email:deeukhal@yahoo.co.uk
brahmasha@gmail.com
Website : www.thearyasamaj.org
of Delhi Arya Pratinidhi Sabha

Sh. B.D. Ukhul
Secretary
Dr. B.B. Vidyalankar 0124-4948597
President
Col.(Dr.) Dalmir Singh (Retd.)
V.President
Dr. Mahendra Gupta *V.President*
Ms. Deepti Malhotra
Treasurer
Editorial Board
Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar, Editor
Dr. Harish Chandra
Dr. Mahendra Gupta
Shri Shiv Kumar Madan

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है। किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र दिल्ली ही होगा।

Printed & Published by
B.D. Ukhul for Brahmasha India Vedic Research Foundation
Under D.C.P.
License No. F2 (B-39) Press/ 2007
R.N.I. Reg. No. DELBIL/ 2007/22062
Price : Rs. 10.00 per copy
Annual Subscription : Rs. 100.00

CONTENTS

1. लिखना है तो.....
–संदीप सरस 2
जीवन सुख आधार
–रमेश बाबू शर्मा 'व्यस्त'
2. संपादकीय 4
3. षड्दर्शन-परिचय 7
–राजवीर शास्त्री
4. हिन्दू नववर्ष ही वास्तविक नववर्ष है *–संदीप सरस* 10
5. शिवरात्री को ऋषि दयानन्द को हुए बोध से देश व विश्व का अपूर्व कल्याण हुआ 13
–मनमोहन कुमार आर्य
6 मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम 18
–डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह
7. बाबर : तुलसी की दृष्टि में (तुलसी दोहा शतक) 23
8. राम ने बिना विचलित हुए जीवन के कठिन क्षणों का सामना किया
–सद्गुरु जग्गी वासुदेव 24
9. महान विचारक और समाज सुधारक थे डॉ. आम्बेडकर 26
10. भीमराव आम्बेडकर की 126वीं जयन्ती (14 अप्रैल) 30
–आई.डी. गुलाटी
11. चुनावी माहौल और ऐडवरटाइजिंग
–प्रसून जोशी 31
12. Vivekananda, A Spiritual Billionaire33
-Anshul Chaturvedi

संपादकीय

प्रयागराज में अर्धकुम्भ का अभूतपूर्व आयोजन

प्रयागराज में कुम्भ का यह विशाल मेला विश्व का सबसे बड़ा धार्मिक आयोजन था जिसमें करोड़ों तीर्थ-यात्रियों, साधु-सन्तों और श्रद्धालुओं ने भाग लिया। इनकी संख्या 25 करोड़ से भी अधिक थी जिसे विश्व के कीर्तिमानों की गिनीज़ बुक ऑफ वर्ल्ड रिकॉर्ड्स में स्थान मिला।

पिछले कुंभ मेले में क्षेत्र का विस्तार 1600 हेक्टेयर था, जबकि इस वर्ष पूर्व से द्विगणित 3200 हेक्टेयर में 24 सेक्टरों में 6000 संस्थाओं को बसाया गया था। इस कुंभ में पहली बार 72 देशों के मिशनों के प्रतिनिधियों तथा 3200 से अधिक प्रवासी भारतीयों ने कुंभ के आयोजन को देखा। कुंभ में अभ्यागत अतिथियों के आवास के लिए विभिन्न आकार के पाँच सितारा तम्बुओं का विशाल नगर बसाया गया था।

कुंभ में भाग लेन वाले अतिथियों की सुविधा के लिए स्वच्छता का विशेष ध्यान रखा गया। वहाँ 1,22,500 शौचालयों का निर्माण किया गया और 15,000 सफाई कर्मचारियों की तैनाती की गई। पूरे कुंभ क्षेत्र में 20,000 कूड़ेदान रखवाए गए तथा नियमित रूप से कूड़ा उठाने के लिए 150 टिपलर वाहन लगाए गए। सभी कुंभ में भाग लेने वाले स्वदेशी और विदेशी अभ्यागतों ने स्वच्छता की प्रशंसा की। इसके अतिरिक्त संपूर्ण कुंभ क्षेत्र में सुरक्षा-व्यवस्था भी अतिव्यवस्थित थी। यदि कोई व्यक्ति अपने परिवार या समूह से बिछुड़ जाता तो उसे शीघ्र ही अपने संबंधियों से मिला दिया जाता था। इस प्रयोजन के लिए स्वयं-सेवकों के दल कार्यरत थे।

पुराण कथाओं के अनुसार अतीव पुरातन काल में देवों और असुरों ने अमृत पाने के लिए समुद्र का मंथन किया। वे इसे पाकर अमर होना चाहते थे। देवताओं ने अमृत पर कब्जा कर लिया। उन्होंने अमृत को एक कुंभ में डाल लिया। इस बीच आपसी छीना-झपटी में अमृत की कुछ बूँदें चार

स्थानों–उज्जैन, नासिक, हरिद्वार और प्रयागराज पर गिर गईं। इन्हीं चार स्थानों पर नियत अवधि में कुंभ का आयोजन होता है। जो लोग (अन्ध) श्रद्धा सं संगम पर विशेष अवसरों (मकरसंक्रान्ति–15 जनवरी, पौष पूर्णिमा, 21 जनवरी, मौनी अमावस्या 4 फरवरी तथा वसन्त पंचमी –10 फरवरी) पर स्नान करते हैं उन्हें मोक्ष की प्राप्ति होती है। इस स्नान–दिवसों में सबसे पहले 13 नगा अखाड़ों के साधुओं को स्नान का अवसर मिलता है। इस कुंभ में जूना अखाड़े के साथ किन्नर अखाड़ा भी जुड़ गया, इस तरह अखाड़ों की संख्या 14 हो गई।

कुम्भ में नगा साधुओं के अजीबों गरीब कृत्य

नगा संन्यासियों के संसार में आस्था, रहस्य और साधना के साथ हठयोग के अजीबो–गरीब उदाहरण भी मिलते हैं। इसमें कुछ साध्वियाँ भी पीछे नहीं है। कुछ साधु मौन साधना करते हुए मौनी बाबा बन गए तो केई एक टाँग पर खड़े होकर खड़ेश्वरी बाबा के नाम से जाने लगे। कुछ नगा साधुओं ने वर्षों से हाथ ऊपर किए हुए हैं। कुछ ने अपनी जटाएँ आठ–दस फीट तक बढ़ा ली हैं। जूना अखाड़ा की महंत दया भारती की जटाएँ 10 फीट से लंबी हैं, जिन्हें वे छह महीने में एक बार ही धोती है। तंत्र–साधना की शक्तिपीठ कामाख्या के महंत मनोज भारती की दाढ़ी आठ फीट लंबी है जिसे वे कभी–कभार गंगा के रेत से धोते हैं। इसी तरह एक नगा संन्यासी शक्तिगिरी 70 किलो रुद्राक्ष की ड्रेस शरीर पर धारण किए हुए था।

कुछ इंजीनियर और मैनेजमेंट के स्नातक भी बने नगा साधु

कच्छ के रजत कुमार राय (27) के पास गैरीन इंजीनियरिंग का डिप्लोमा है। वे संन्यास लेकर नगा साधु बन गए। इसी तरह शंभुगिरी (29) युक्रेन में मैनेजमेंट में स्नातक हैं और धनश्याम गिरी (18) उज्जैन से बारहवीं में प्रथम रहे, ये भी गृहत्याग कर नगा साधु बन गए।

हाल ही में कुंभ में बड़ी संख्या में भारतीयों एवं विदेशी लोग सिर मुंडवा कर पूरी रात यज्ञ के उपरान्त नगा साधु बन गए। दीक्षा का यह आयोजन केवल कुंभ पर ही होता है।

जब स्वामी दयानन्द सरस्वती ने कुम्भ पर 'पाखण्ड खण्डिनी' पताका गाड़ दी।

स्वामी दयानन्द सरस्वती धर्मप्रचार के लिए सन् 1867 के कुंभ से एक मास पूर्व ही हरिद्वार पहुँच गए और वहाँ भीमगोड़े के ऊपर सप्त सरोवर पर शिविर स्थापित कर लिया। उन्होंने सत्य धर्म के प्रचार और असत्य बातों के खंडन के लिए वहाँ "पाखण्ड खाण्डिनी" पताका गाड़ दी। स्वामी जी ने वहाँ प्रतिदिन उपदेश देना आरंभ कर दिया जिसमें वे मूर्तिपूजा, अवतारवाद, भागवत, तीर्थ, तिलक छाप आदि का प्रबल खंडन करते थे। मेले में इसकी चर्चा चारों ओर होने लगी। लोग इस अद्‌भुत संन्यासी को देखने आने लगे और इनके डेरे पर मेला लगा रहने लगे। क्योंकि यह संन्यासी हिन्दू (पौराणिक) धर्म की आधारभूत मूर्तिपूजा आदि बातों का खण्डन करता था। बहुत-से लोग उनका उपदेश सुनकर चकित रह जाते और उनके अनुयायी बन जाते। जिन्हें उनकी बातें पसंद नहीं आती वे खीझकर उन्हें नास्तिक आदि कह कर अपनी राह लेते। उन दिनों स्वामी जी का किसी प्रसिद्ध पंडित से शास्त्रार्थ नहीं हुआ। यों कुछ धर्माचार्य और पंडित प्रच्छन्न रूप से स्वामी जी का उपदेश सुनने आते या अपने छात्रों को स्वामी जी के विचार के लिए भेज दिया करते।

स्वामी जी ने कुंभ में देखा कि जनता अंधकार में फँसी हुई है। संस्कृत के विद्वान् स्वार्थान्ध होकर लोगों को धर्म के नाम पर लूट रहे हैं। जिनका कार्य लोगों (गृहस्थों) को धर्मोपदेश करना था वे स्वयं ही उन्हें असत्य सिद्धान्तों के कीचड़ में फँसाकर धर्म-विमुख कर रहे हैं। साधु समाज का भी वैसी हीनदशा है। वे नाम के ही साधु हैं, परन्तु गृहस्थों से भी गए बीते हैं। ऐसी दशा में स्वामी जी के मन में देश-हित और समाज कल्याण की तीव्र इच्छा हुई। उन्होंने सोचा कि उन्हें संसार की मोह माया से ऊपर उठना चाहिए। और वेद आदि सत्य शास्त्रों का प्रचार करना चाहिए। इसके बाद उन्होंने पूरा जीवन इसी कार्य में लगा दिया।

षड्दर्शन-परिचय

-राजवीर शास्त्री

गत अंक से आगे.....

गत अंक में हमने दो आस्तिक दर्शनों (न्याय और वैशेषिक) की चर्चा की थी। इस अंक में हम दो अन्य-आस्तिक दर्शनों (सांख्यदर्शन और योगदर्शन) के बारे में विचार करेंगे।

3. **सांख्यदर्शन**-कपिल मुनि द्वारा सांख्यदर्शन में तत्त्वों की अतिसूक्ष्म अवस्थाओं और चेतन-अचेतन के रूप में उनके विश्लेषण को तथा उनके वस्तुभूत भेदभाव की आवश्यकता को प्रस्तुत किया है। यह दर्शन न्याय के प्रमाणों द्वारा वस्तु सिद्धि और वैशेषिक के तत्त्व विषयक प्रतिपाद्य अंश को अपनी सीमा में समेटे रहता है। अतः उसका न्याय-वैशेषिक से कोई विरोध नहीं।

सांख्य दर्शन का उद्देश्य संसार के लोगों को दुख-सागर से पार उतार कर उन्हें मोक्ष के मार्ग पर अग्रसर करना है। इस शास्त्र में जीवात्मा के दो प्रयोजन बताए गए हैं। ये हैं- भोग और अपवर्ग। मनुष्य का सबसे उत्कृष्ट प्रयोजन अपवर्ग यानि मोक्ष प्राप्ति है। अतः आत्मा के लिए मोक्ष के स्वरूप और उसे पाने के साधनों का प्रतिपादन इस शास्त्र का मुख्य प्रयोजन है। सांख्यदर्शन का प्रारंभ मोक्ष प्राप्ति के लिए तीन प्रकार के दुःखों से अतिशय छुटकारा पाना है। ये दुःख आध्यात्मिक, आधिभौतिक और आधिदैविक हैं। सांख्य के अनुसार संसार का निर्माण तीन प्रकार के मूलतत्त्वों से हुआ है, ये हैं सत्व, रजस, और तमस्। इन तीनों की साम्यावस्था प्रकृति है। यह मूल-प्रकृति है। हमें जो दृश्य जगत् दिखाई देता है वह मूल प्रकृति की विषमानस्था है। इस प्रकृति से महत् (बुद्धि), अहंकार, अहंकार से पंचतन्मात्राएँ (सूक्ष्मभूत) इनसे दोनों प्रकार की इंद्रियाँ, तन्मात्रों से स्थूलभूत उत्पन्न होते हैं। इसके अतिरिक्त पुरुष चेतन हैं इस प्रकार ये कुल पच्चीस पदार्थ हैं। कपिल मुनि सांख्य में जड़ प्रकृति को जगत् का मूल उपादान

स्वीकार करते हैं, अतः ईश्वर को जगत् का अधिष्ठाता व नियन्ता मानते हैं। इसी कारण प्रकृति से अतिरिक्त ईश्वर तथा किसी अन्य तत्त्व को जगत् के उपादान होने का निषेध किया गया है। 'ईश्वर सिद्धेः' सूत्र में भी जगत् के उपादान भूत ईश्वर को असिद्ध बताया है। सर्व जगत् नियन्ता ईश्वर का यहाँ निषेध नहीं किया है। पूर्वापर प्रसंग के अनुसार यह अर्थ किस प्रकार स्पष्ट होता है, यह सूत्र के प्रकरण और उसकी टिप्पणी में विस्तार के साथ प्रकट किया गया है। सांख्य के अन्य प्रसंगों में भी ईश्वर के जगत् नियन्ता व अधिष्ठाता होने तथा प्रकृति के जगत् का उत्पादक होने का विस्तृत वर्णन है। सांख्यदर्शन का आरंभ तीन प्रकार के दुःखों की अत्यन्त निवृत्तिरूप पुरुषार्थ का प्रतिपादन करते हुए किया है। पूरे शास्त्र में प्रकृति और पुरुष के स्वरूप का विवेचन तथा दुःख निवारण के उपायों का निरूपण किया गया है। दुःखों का अस्तित्व प्रकृति-पुरुष के संपर्क से उभरता है। परन्तु उस संपर्क को टाला भी नहीं जा सकता। वह संपर्क चाहे किसी निमित्त से हो उसका निवारण करना लक्ष्य होना चाहिए। उसी स्थिति में परमपुरुषार्थ का लाभ है।

योगदर्शन-योगदर्शन महर्षि पतंजलि की रचना है। सांख्यदर्शन में चेतन-अचेतन के जिस विश्लेषण को प्रस्तुत किया है, उसके साक्षात्कार की प्रक्रियाओं का वर्णन योगदर्शन में है। सांख्यदर्शन में प्रकृति और पुरुष के भेद के साक्षात्कार को मोक्ष का साधन बताया है जिसे 'प्रकृति पुरुष विवेक' कहा है। साधारण व्यक्ति जड़ देह को चेतन आत्मा समझता है। यह अज्ञान के कारण है। चित्त वृत्तियों को बाहरी विषयों से रोकने को योग कहा है। चित्त त्रिगुणात्मक जड़ है। चित्त की पाँच अवस्थाएँ हैं। ये हैं- क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध। इनमें एकाग्र और निरुद्ध ये दो अवस्थाएँ योग की हैं। अभ्यास और वैराग्य से पहले चित्त एकाग्र होता है और उसके बाद निरुद्ध होता है। ईश्वर-प्राणिधान (ओ३म्-प्रणव के जप और

ईश्वर के स्वरूप के चिन्तन से चित्त को विक्षिप्त करने वाले विघ्न दूर हो जाते हैं।

यम, नियम, आसान, प्राणयाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि ये अष्टांग योग के आठ अंग है। इनके अनुष्ठान से चित्त के शुद्ध होने से प्रकृति-पुरुष विवेक प्राप्त होता है। यम और नियमों के अनुष्ठान से चित्त की चंचलता दूर होती है और अनेक प्रकार के सुखों की प्राप्ति होती है। यम-नियमों के पालन के बिना योग के अंगों का अभ्यास व्यर्थ है। प्राणायाम के द्वारा चित्त के मल (विकार) धोए जाते हैं और मन निर्मल हो जाता है। अब मन धारणा के योग्य हो जाता है। बहिर्मुख इंन्द्रियों का अन्तर्मुख होना प्रत्याहार है। इससे मनुष्य जितेन्द्रिय हो जाता है।

योग के अंतरंग अंग धारणा, ध्यान और समाधि हैं। चित्त को किसी एक स्थान पर एकाग्र करना धारणा है। जिस स्थान पर चित्त को टिकाया जाए उसी स्थान में उसकी वृत्ति का एकाग्र होना ध्यान है। योगाभ्यास के सातवें चरण पर पहुँचने पर चित्त की जिस एकाग्र अवस्था में ध्याता, ध्येय, ध्यान तीनों की प्रतीति होती है उसे ध्यान कहते हैं। जब ध्याता ध्यान में इतना लीन होजाता है कि ध्यान के होते हुए भी ध्याता को उसकी प्रतीति नहीं होती- वह समाधि की अवस्था होती है। उस अवस्था में अपनी विस्मृति हो जाती है और केवल ध्येय विषयक सत्ता आत्मतत्व की ही उपलब्धि होती है। अर्थात् ध्येय से तादात्म्य हो जाने से अपना पृथकत्व प्रतीत नहीं होता। ध्येय विषय पर इस प्रकार का चित्त स्थैर्य समाधि है। इस समाधि की प्राप्ति से योग का उद्देश्य पूरा हो जाता है।

समस्त दुःखों से निवृत्ति मोक्ष पा लेने पर होती है। मोक्ष अविद्या के संस्कारों के नष्ट होने पर संभव है। अविद्या के संस्कार ईश्वर के साक्षात्कार के बिना नष्ट नहीं हो सकते और ईश्वर साक्षात्कार समाधि के बिना नहीं हो सकता। समाधि चित्तवृत्ति निरोध का नाम है। चित्तवृत्तियों का निरोध यम-नियमों का पालन करने से होता है।

हिन्दू नववर्ष ही वास्तविक नववर्ष है

–संदीप सरस

विक्रम संवत् 2076 का शुभारम्भ चैत्र मास के शुक्ल पक्ष से है। इसी तिथि से ब्रह्मा जी ने सृष्टि का निर्माण किया था, इसलिए इस पावन तिथि को नव संवत्सर–चक्र के अनुसार सूर्य इस ऋतु में अपने राशि–चक्र की प्रथम राशि मेष में प्रवेश करता है। भारतवर्ष में वसंत ऋतु के अवसर पर नूतन वर्ष का आरम्भ मानना इसलिए भी उपयुक्त है क्योंकि इस ऋतु में चारों ओर हरियाली रहती है तथा नवीन पत्र–पुष्पों से प्रकृति नव श्रृंगार करती है।

लोग नववर्ष का स्वागत करने के लिए अपने घर–द्वार सजाते हैं तथा नवीन वस्त्राभूषण धारण करते हैं। शास्त्रीय मान्यता के अनुसार चैत्र शुक्ल प्रतिपदा की तिथि के दिन प्रातः काल स्नान आदि के द्वारा शुद्ध होकर हाथ में गंध, अक्षत, पुष्प और जल लेकर 'ओम भूर्भवः स्वः' – गायत्री मंत्र से नव संवत्सर का आवाहन करते हैं और भगवान से प्रार्थना करते हैं 'हे भगवान! आपकी कृपा से मेरा यह वर्ष कल्याणकारी हो और इस संवत्सर के मध्य में आने वाले सभी अनिष्ट और विघ्न शांत हो जाएँ।'

राष्ट्रीय संवत्

भारतवर्ष में इस समय देशी विदेशी मूल के अनेक संवतों का प्रचलन है किंतु भारत के सांस्कृतिक इतिहास की दृष्टि से सर्वाधिक लोकप्रिय राष्ट्रीय संवत विक्रम संवत् ही है। आज से लगभग 2076 वर्ष पूर्व भारतवर्ष के प्रतापी राजा विक्रमादित्य ने देशवासियों को शकों के अत्याचारी शासन से मुक्त किया था। उसी विजय की स्मृति में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा की तिथि से विक्रम संवत का भी आरम्भ हुआ था।

भारतीय कालगणना के अनुसार वसंत ऋतु और चैत्र शुक्ल प्रतिपदा की तिथि अति प्राचीनकाल से सृष्टि प्रक्रिया की भी

पुण्य तिथि रही है। वसंत ऋतु में आने वाले वासंतिक नवरात्र का प्रारम्भ भी सदा इसी पुण्यतिथि से होता है। विक्रमादित्य ने भारत राष्ट्र की इन तमाम कालगणनापरक सांस्कृतिक परम्पराओं को ध्यान में रखते हुए ही चैत्र शुक्ल प्रतिपदा की तिथि से ही अपने नवसंवत्सर को चलाने की परम्परा शुरू की थी और तभी से समूचा भारत राष्ट्र इस पुण्य तिथि का प्रतिवर्ष अभिवंदन करता है। दरअसल, भारतीय परम्परा में चक्रवर्ती राजा विक्रमादित्य शौर्य, पराक्रम तथा प्रजाहितैषी कार्यों के लिए प्रसिद्ध हैं। उन्होंने शक राजाओं को पराजित करके भारत को विदेशी राजाओं की दासता से मुक्त किया था। राजा विक्रमादित्य के पास एक ऐसी शक्तिशाली विशाल सेना थी जिससे विदेशी आक्रमणकारी सदा भयभीत रहते थे। ज्ञान-विज्ञान, साहित्य, कला संस्कृति को विक्रमादित्य ने विशेष प्रोत्साहन दिया था। धंवंतरि जैसे महान वैद्य, वराहमिहिर जैसे महान ज्योतिपुन्ज और कालिदास जैसे महान साहित्यकार विक्रमादित्य की राज्यसभा के नवरत्नों में शोभा पाते थे। प्रजावत्सल नीतियों के फलस्वरूप ही विक्रमादित्य ने अपने राज्यकोष से धन देकर दीन दुःखियों को साहूकारों के कर्ज से मुक्त किया था। एक चक्रवर्ती सम्राट् होने के बाद भी विक्रमादित्य राजसी ऐश्वर्य भोग को त्यागकर भूमि पर शयन करते थे। वे अपने सुख के लिए राज्यकोष से धन नहीं लेते थे।

राष्ट्र की सांस्कृतिक पहचान

पिछले दो हजार वर्षों में अनेक देशी और विदेशी राजाओं ने अपनी साम्राज्यवादी आकांक्षाओं की तुष्टि करने तथा इस देश को राजनीतिक दृष्टि से पराधीन बनाने के प्रयोजन से अनेक संवतों को चलाया किंतु भारत की सांस्कृतिक पहचान केवल विक्रमी संवत् के साथ ही जुड़ी है। अंग्रेजी शिक्षा-दीक्षा और पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव के कारण आज

भले ही सर्वत्र ईस्वी सन् का बोलबाला हो और भारतीय तिथि-मासों की काल गणना से लोग अनभिज्ञ होते जा रहे हों परंतु वास्तविकता यह भी है कि देश के सांस्कृतिक पर्व-उत्सव तथा राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, गुरु नानक आदि महापुरुषों की जयंतियाँ आज भी भारतीय काल गणना के हिसाब से ही मनाई जाती है। ईस्वी सन् के अनुसार नहीं। विवाह-मुण्डन का शुभ मुहूर्त हो या अन्य धार्मिक कृत्य आदि सामाजिक कार्यों का अनुष्ठान, भारतीय पंचांग पद्धति के अनुसार ही किया जाता है, ईस्वी सन् की तिथियों के अनुसार नहीं।

वास्तविक नववर्ष

विश्व की सर्वाधिक वैज्ञानिक कालगणना का नववर्ष है वर्ष प्रतिपदा। वर्ष प्रतिपदा, गुड़ीपाड़वा, नवसंवत्सर, चेट्टीचंड आदि नामों से मनाया जाने वाला यह वर्ष के स्वागत का पर्व काल के माहात्म्य का पर्व है। इसका एक नाम युगादी है जिसे उगादी भी कहा जाता है। युग का आदि अर्थात् प्रारंभ का दिन। इस दिन ब्रह्माजी ने सृष्टि की रचना की। सृजन के साथ ही समय का प्रारंभ हुआ। वास्तव में यह अत्यन्त वैज्ञानिक संकल्पना है। आधुनिक खगोलशास्त्रियों ने पाया कि वहाँ समय रुक जाता है। समय का यह वैविध्यपूर्ण बर्ताव आधुनिक शास्त्रज्ञों के लिए पहेली बना हुआ है। आज जो तारे हम देखते हैं वे अनेक प्रकाशवर्ष हमसे दूर हैं अर्थात् उनका जो प्रकाश हम अभी देख रहे हैं वह कई वर्ष पूर्व वहाँ से विकीर्ण हुआ था। इस ज्ञान से काल को समझना वैज्ञानिकों के लिए और अधिक कठिन हो गया। काल भूत से भविष्य की ओर एक दिशा में प्रवाहित होता है यह धारणा रखकर विचार करनेवाले काल के इस बहुआयामी रूप को समझ नहीं पाते हैं।

शिवरात्रि को ऋषि दयानन्द को हुए बोध से देश व विश्व का अपूर्व कल्याण हुआ

–मनमोहन कुमार आर्य,

वेदों के अपूर्व ऋषि और आर्यसमाज के संस्थापक ऋषि दयानन्द सरस्वती को मंगलवार 12 फरवरी, सन् 1839 को शिवरात्रि के दिन बोध हुआ था कि उनके पिता व परिवार जन जिस शिवलिंग की पूजा करते हैं वह सच्चा व यथार्थ ईश्वर नहीं है। शिव पुराण में वर्णित भगवान शिव की जिस कथा को शिवरात्रि के दिन व्रत करते हुए सुना व सुनाया जाता है, वह कथा भी मन्दिर वाले शिवलिंग पर यथार्थ रूप से घटित नहीं होती। शिवरात्रि के दिन हम जिस कथा का वाचन करते हैं व सुनते हैं वह कथा कुछ ऐतिहासिक और कुछ पारमार्थिक होती है। कथा में भगवान शिव के जिन गुणों का वर्णन किया जाता है वे शिव मूर्ति या शिवलिंग में किंचित् भी नहीं पाये जाते। यदि यह कथा व शिवलिंग की मूर्ति सत्य होते तो फिर शिवरात्रि के दिन 14 वर्षीय बालक मूलशंकर को मन्दिर के चूहों को शिव मूर्ति पर अबाध रूप से उछल–कूद करते देख कर उसकी परम्परागत उपासना से निवृत्ति व अनासक्ति न हुई होती। उन्होंने देखा कि देर रात्रि को बिलों से चूहे निकलते हैं और शिवलिंग के चारों ओर दौड़ लगाते हैं। शिव भक्तों व व्रतियों ने वहाँ जो मिष्ठान्नरूपी नैवेद्य चढ़ाये थे, उसका स्वतन्त्रतापूर्वक भक्षण करते हैं। जीवित मनुष्य के शरीर पर यदि मक्खी भी बैठ जाए तो वह उसे उड़ा देता है और मच्छर बैठे तो उसे हटाता व मार देता है। मक्खी व मच्छर भी तुच्छ जीव होकर मनुष्य से डरते हैं परन्तु चूहे शिवजी से पूरी तरह से निर्भय होकर उसके शरीर पर उछल कूद मचा रहे थे। शिवमूर्ति का यह जड़वत् व्यवहार देखकर बालक मूलशंकर को यह निश्चय हो गया कि उनके सम्मुख जो शिवमूर्ति है वह शक्ति, बुद्धि व ज्ञान से सर्वथा रहित है। उन्होंने उसी दिन अपने पिता से जो कथा सुनी थी उसके अनुसार शिव कैलाश पर्वत पर निवास करते हैं जो सर्वशक्तिमान हैं और विश्व के बड़े बलशाली व्यक्ति को

संकल्प व संकेत मात्र से धराशायी कर सकते हैं। शिवलिंग की मूर्ति में वह शक्ति दृष्टिगोचर या विद्यमान न होने अथवा चूहों को दूर न रख पाने के कारण बालक मूलशंकर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि यह असली शिव नहीं है, अतः उन्होंने न केवल अपने व्रत का ही त्याग कर दिया था अपितु भविष्य में शिवलिंग व शिवमूर्ति की पूजा-अर्चना न करने का संकल्प भी कर लिया। ऋषि दयानन्द को शिवरात्रि के उस दिन यही बोध हुआ था। इसके बाद वह सच्चे शिव की खोज में जुट गये जिसे उन्होंने भारी तप व पुरुषार्थ करके प्राप्त कर ही लिया। यही ऋषि के बोध का फल था जिससे न केवल भारत अपितु सारा विश्व लाभान्वित हुआ। यह भी ज्ञान हुआ कि सारा संसार अविद्या से ग्रस्त है। संसार के लोगों ने अपनी अविद्या व किन्हीं स्वार्थों के कारण ऋषि दयानन्द के द्वारा अन्वेषित सच्चे शिव के सत्य स्वरूप विषयक ज्ञान की उपेक्षा की और आज भी संसार अविद्या से ग्रस्त होकर मत-मतान्तरों के अन्धविश्वासों को मान रहा है।

ऋषि दयानन्द को शिवरात्रि के दिन जो बोध हुआ उसका परिणाम यह हुआ कि उन्हें संसार के प्रति वैराग्य हो गया और वे सच्चे ईश्वर को जानने के लिए सच्चे जिज्ञासु बन गये। शिवरात्रि पर बोध होने के समय उनकी आयु मात्र 14 वर्ष थी, इसलिए उन्होंने स्वयं को अध्ययन में व्यस्त किया और यजुर्वेद को स्मरण करने के साथ अनेक व्याकरण व शास्त्रीय ग्रन्थ पढ़ते रहे। यदा-कदा वह अपने गुरुजन और मित्रों से भी ईश्वर के विषय की शंकायें करते रहते थे। ऋषि दयानन्द के वैराग्य विषयक विचार माता-पिता से छिप नहीं सके, अतः उनके द्वारा उनके विवाह की तैयारी आरंभ की गई। जब बाल मूलशंकर को पता लगा कि वे विवाह से बच नहीं सकते तो गृहस्थ में न फँसने का निश्चय कर 18 वर्ष की आयु में उन्होंने पितृ गृह का त्याग कर दिया। ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रथम उन्होंने देश भर के धार्मिक स्थानों में जाकर योगियों व धर्म गुरुओं से सम्पर्क कर सिद्ध योगी बनने और सद्ज्ञान प्राप्त करने के लिए उन्होंने उत्तराखंड के अनेक पर्वतों व वनों में स्थित धार्मिक स्थानों पर जाकर योगियों की खोज की। वहाँ

उन्हें यदि कोई विद्वान मिला तो उससे वार्तालाप कर विद्या प्राप्त करने का प्रयत्न किया। इसी क्रम में उन्हें अपने एक योग गुरु से मथुरा में संस्कृत व्याकरण के आचार्य व व्याकरण के सूर्य स्वामी विरजानन्द सरस्वती जी का पता चला। सन् 1860 में स्वामी दयानन्द ने मथुरा में गुरुचरणों में पहुँच कर उनसे विद्यादान देने की प्रार्थना की। इसके बाद लगभग तीन वर्ष उनके सान्निध्य में रहकर अष्टाध्यायी-महाभाष्य एवं निरुक्त आदि व्याकरण ग्रन्थों सहित अनेक विद्या शास्त्रों का अध्ययन किया। उन्होंने अपनी योग्यता को इतना बढ़ाया कि वे धाराप्रवाह सरल संस्कृत में भाषण करने में समर्थ होने के साथ किसी भी शास्त्रीय विषय पर प्रभावशाली उपदेश कर सकते थे। सन् 1863 में गुरु विरजानन्द सरस्वती जी से दीक्षा लेकर उनके परामर्श के अनुसार उन्होंने संसार से अविद्या दूर करने का निश्चय किया और इस कार्य को सफल करने में प्राणपण से समर्पित हो गये। 14 वर्ष की आयु में शिवरात्रि के दिन जिस बोध व ज्ञान का प्रकाश स्वामी दयानन्द जी की आत्मा में हुआ था वह कालान्तर में पल्लवित, पुष्पित व विकसित होकर विस्तार के शिखर पर पहुँचा जहाँ उन्हें संसार विषयक सभी प्रकार के सद्ज्ञान की प्राप्ति हुई। मनुष्य के जीवन में जितनी भी शंकायें हो सकती हैं, उन सबका समाधान ऋषि दयानन्द को प्राप्त हुआ। वह न केवल समस्त शास्त्रों के ज्ञान से आलोकित हुए अपितु ईश्वरीय ज्ञान वेदों को भी सम्पूर्णता के साथ उन्होंने आत्मसात किया और उसका प्रकाश दिग्दिगन्त व विश्व भर में फैलाया। उन्होंने घोषणा की कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना-पढ़ाना और सुनना-सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है। वेदों के ईश्वरीय ज्ञान होने के कारण संसार के सभी मानवरचित ग्रन्थ तुच्छ व एकांगी है। कोई भी मानव निर्मित ग्रन्थ वेदों के समान नहीं है। सभी ग्रन्थों की वही मान्यतायें स्वीकार व आचरणीय हो सकती है जो वेदानुकूल हों। वेदविरुद्ध मान्यताओं को प्रमाण नहीं माना जा सकता। महर्षि दयानन्द ने ईश्वर के सच्चे स्वरूप को जाना और समाधि

अवस्था में उसका साक्षात्कार किया। हम विचार कर यह भी अनुमान करते हैं कि यदि ऋषि दयानन्द को ईश्वर का साक्षात्कार न होता तो वे वेद प्रचार का कार्य कदापि आरम्भ न करते। उन्होंने एक स्थान पर कहा भी है कि जीवन में उन्हें जो प्राप्त करना था वह प्राप्त हो चुका था। उन्होंने अपने प्राणों का त्याग इसलिए नहीं किया क्योंकि उनकी विद्या प्राप्ति की इच्छा तब अधूरी थी जो गुरु विरजानन्द जी के सान्निध्य में रहकर पूरी हुई। उन्होंने संसार का कल्याण करने के लिए ही आर्यसमाज की स्थापना सहित कालजयी अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कारविधि, आर्याभिविनय आदि अनेक ग्रन्थों की रचना की। उनके समय में न वेद उपलब्ध थे और न सत्य वेदार्थ। उन्होंने पुरुषार्थ कर वेद मन्त्र संहिताओं को प्राप्त करने सहित उनके सत्य वेदार्थ को जाना व उसका भाष्य कर सबके लाभार्थ प्रकाशन किया। उन्होंन वेद प्रचार कार्य, मूर्तिपूजा, अवतारवाद, फलित ज्योतिष आदि मिथ्या विश्वासों का खण्डन किया। वे अहिंसा के पुजारी होने के साथ वैदिक शास्त्रों में वर्णित अहिंसा के समर्थक थे। उनकी अहिंसा दुष्टाचार का दमन और सदाचार को सम्मानित करने वाली थी। उनका मानना था कि एक दुष्ट व्यक्ति को दण्डित करने से उसके द्वारा भविष्य में पीड़ित किये जाने वाले अनेकानेक व्यक्तियों को अन्याय व अत्याचार से बचाया जा सकता है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम, योगेश्वर श्रीकृष्ण, चाणक्य व सभी वैदिक ऋषियों के वे प्रशंसक थे। उन्होंने संसार से अविद्या व अज्ञान का नाश करने के लिए वेदों की शिक्षा व गुरुकुल प्रणाली को प्रवृत्त करने का सत्यार्थप्रकाश में समर्थन किया। वह देश की आजादी के भी मन्त्रदाता व उद्घोषक थे। सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों में उनके स्वराज्य विषयक विचारों को देखा जा सकता है। माँसाहार व पशुहत्या के वे घोर विरोधी थे और ऐसा करना उनकी दृष्टि में अमानवीय और निन्दनीय था। गोरक्षा के समर्थन व गोहत्या के विरोध में उन्होंने पृथक् से 'गोकरुणानिधि' नाम से एक प्रेरक पुस्तक लिखी। हिन्दी की उन्नति के लिए भी उन्होंने सबसे अधिक सराहनीय एवं प्रशंसनीय कार्य किया। विधवाओं

की स्थिति सुधारने के लिए उन्होंने बाल विवाह जैसी कुप्रथा का निषेध किया। समाज में विधवा विवाह का प्रचलन भी आर्यसमाज के अनुयायियों के द्वारा ही हुआ। स्वामी जी ने शिवरात्रि को हुए बोध व उसके बाद विद्या प्राप्ति के उनके प्रयत्नों से मिली सफलता के कारण अस्पृश्यता व छुआछूत का उन्होंने विरोध किया और दलितों की शिक्षा व समानता के अधिकारों का समर्थन किया। उन्होंने कहा है कि विद्या व ज्ञान से सर्वथा शून्य मनुष्य की संज्ञा ही शूद्र है जिसे द्विजों व विप्रों के यहाँ भोजन पकाने आदि का कार्य करने के विधान का उन्होंने समर्थन किया है। हमारे मित्रों ने बताया है कि पूर्व प्रधानमंत्री चौधरी चरणसिंह स्वामी दयानन्द के कट्टर अनुयायी थे। वह किसी दलित बन्धु को ही अपना रसोइया रखते थे। दलितोद्धार के क्षेत्र में भी ऋषि दयानन्द के अनुयायियों ने उनकी प्रेरणा के अनुरूप उल्लेखनीय कार्य किए। उन्हीं से प्रेरणा लेकर आर्यसमाज ने गुरुकुल व दयानन्द ऐंग्लो वैदिक स्कूलों की स्थापना कर देश से अज्ञान दूर करने का प्रयास किया। स्वामी दयानन्द ने अपने जीवन में विज्ञान शिक्षा को भी उचित महत्त्व दिया। यदि वह कुछ दिन और जीवित रहते तो देश में विज्ञान पर आधारित उद्योगों की स्थापना में भी अग्रणीय भूमिका निभाते। स्वामी दयानन्द पहले व्यक्ति थे जिन्होंने शुद्धि का प्रवर्तन व प्रचार किया और स्वयं देहरादून में मो. उमर नाम के एक व्यक्ति व उसके परिवार को शुद्ध कर वैदिक धर्मी बनाया। देश और विश्व कल्याण के इन सब कार्यों का श्रेय स्वामी दयानन्द को 12 फरवरी, 1839 की शिवरात्रि को हुए बोध का परिणाम कह सकते हैं। इसी कारण देश अज्ञान से काफी कुछ दूर होकर ज्ञान की ओर अग्रसर हुआ। अभी धर्म के क्षेत्र में वेदों को उसकी महत्ता व गरिमा के अनुरूप उचित प्रतिष्ठा मिलना बाकी है। ऋषि दयानन्द की यदि अचानक मृत्यु न होती तो वे इस कार्य को पूरा करने का हर सम्भव प्रयत्न करते। इसी काम को करते हुए उन्होंने अपने प्राणों का उत्सर्ग किया है।

196 चुक्खूवाला-2, देहरादून-248001
फोन-09412985121

मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम

–डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह

राम भारतीय जनमानस में एक आदर्श पुरुष हैं! जीवन में जो श्रेष्ठताएँ मनुष्य में होनी चाहिए वह सब राम के जीवन के उनके चरित्र से साम्य रखती हैं। राम वेदों के ज्ञाता थे। उनका जीवन वेदानुसार था। उनका व्यवहार वेद सम्मत था जो भी कार्य जीवन में किए वैदिक मर्यादाओं के अनुसार किए। उत्तम गुणों से सुशोभित होने से उस महापुरुष को मर्यादा पुरुषोत्तम राम के नाम से जाना जाता है।

वह एक श्रेष्ठ पुत्र, श्रेष्ठ ब्रह्मचारी, श्रेष्ठ प्रजावत्सल थे। उन्होंने समाज की सभी मर्यादाओं को श्रेष्ठता से पालन किया। उनका भ्रातृ-प्रेम महान एवं अनुकरणीय है।

एक श्रेष्ठ ब्रह्मचारीः

राम ने अपनी शिक्षा ऋषि मुनियों के सान्निध्य में रहकर प्राप्त की। महर्षि वशिष्ठ व अन्य गुरुओं ने उन्हें वेद ज्ञान की शिक्षा प्रदान की और जब ऋषि विश्वामित्र अपने साथ वन लेकर गये तो अनेक विद्याएँ उन्हें वहाँ जाकर दीं, महत्त्वपूर्ण विद्या बला अतिबला की शिक्षा दी।

ऋषि विश्वामित्र दोनों सुकुमारों (राम और लक्ष्मण) को अपने साथ ले गए थे क्योंकि वहाँ मारीच सुबाहु जैसे राक्षस यज्ञों में बाधा पहुँचाते थे।

राम लक्ष्मण ने ऋषियों के साथ रहकर सब विद्या प्राप्त कर ली थीं।

तुलसीदास कहते हैं–

गुरु ग्रह गए पठन रघुराई। अल्प विद्या सब पाई।
विद्या विनय-निपुण गुणशीला। खेलहिं खेल सकल नृप लीला।।

वाल्मीकि रामायण में लिखा है–

सर्वेवेदविदः शूरा सर्वे लोक हिते रताः।
सर्वे ज्ञानोपसम्पन्ना सर्वे समुदिता गुणैः।।

(वाल्मीकि रामा. बाल का. सर्ग 18)

विश्वामित्र ने राम को धर्मचक्र, वीर, कालचक्र, विष्णु चक्र, उग्र इन्द्र चक्र, मोदिकी शिखरी, गदा, व्रजास्त्र, शिव, शूलास्त्र,

ब्रह्मास्त्र, आग्नेयास्त्र, वायुअस्त्र, नारायण, धर्मपाश, कालापाक्ष आदि अनेक अस्त्र प्रदान किए तथा समस्त अस्त्रों के संचालन की शिक्षा दी। राम को धनुर्विद्या का पूरा ज्ञान कराया गया। राम लक्ष्मण वन में विश्वामित्र की आज्ञा का पालन करते थे, सेवा के लिए सदैव तत्पर रहते थे। इस प्रकार से राम ने वहाँ ऋषि से समस्त विद्याएँ प्राप्त कर ली थीं।

इसी दौरान महर्षि विश्वामित्र ने राम से कहा- "नर श्रेष्ठ मिथिला के राजा जनक का परम धर्ममय यज्ञ प्रारम्भ होने वाला है उसमें हम सब लोग जाएँगे"। पुरुष सिंह तुम्हें भी हमारे साथ चलना है, वहाँ एक बड़ा ही अद्भुत धनुष रत्न है, तुम्हें उसे देखना चाहिए।

आज ऐसी शिक्षा व्यवस्था नहीं, जहाँ अध्यापक व शिष्य एकदम पारिवारिक सम्बन्धों की भाँति, एक साथ एक मत से रह कर विद्या अर्जन में अगाध श्रद्धा रखते हों। गुरुकुल आश्रमों में विद्यार्थी पच्चीस वर्ष तक ब्रह्मचर्याश्रम में रहकर विद्याध्ययन किया करते थे। ऋषि मुनि उन ब्रह्मचारियों में राष्ट्रप्रेम, नैतिकता, सत्याचरण, जितेन्द्रियता आदि शुभ गुण व वैदिक संस्कारों को आत्मसात् कर देते थे। महाराजा रघु, दिलीप, अज, आदि इनके पूर्वज भी गुरुकुल आश्रमों से विद्या प्राप्त कर चक्रवर्ती शासक हुए थे।

माता पिता के आज्ञाकारीः

चारों भाई माता पिता के अनन्य भक्त थे, उनके सद्गुणों के कारण ही वे आज भी प्रत्येक भारतीय के हृदय में बसे हैं। वाल्मीकि रामायण में लिखा है-

गते च भरते रामो लक्ष्मणश्च महाबलः।
पितरं देव संकाशं पूजयामासतुस्तदा।।

(बालकाण्ड ब्रा. रा.)

अर्थात् भरत के चले जाने पर महाबली श्रीराम और लक्ष्मण उन दिनों जब कैकेयी ने राजा दशरथ से दो वरदान, राम को वनवास तथा भरत को राज सिंहासन, माँग लिए तब राम ने कौशल्या माता के पास जाकर कहा-

गमिष्ये दण्डकारण्यं किमनेनासनेन मे।
विष्टरासन योग्यो हिकालोऽयम् मामुपस्थितः।।
(वा.रा. अ. काण्ड, विंशः सर्गः)
अर्थात् (हे माता) अब तो मैं दण्डकारण्य में जाऊँगा। अतः ऐसे बहुमूल्य आसन की मुझे क्या आवश्यकता है? अब मेरे लिए कुश की चटाई पर बैठने का समय आ गया है।
मैं राजा भोग्य वस्तु का त्याग करके मुनि की भाँति कन्द-मूल और फलों से जीवन निर्वाह करता हुआ चौदह वर्षों तक निर्जन वन मैं निवास करूँगा।
राम माता कौशल्या को सान्त्वना देते हुए कहते हैं-
धर्मो हि परमो लोके धर्मे सत्यं प्रतिष्ठितम्।
धर्म संक्षितमप्येत पितुर्वचनमुत्तमम्।।*(अ.का.एक विंश सर्गः)*
संसार में धर्म ही सबसे श्रेष्ठ है। धर्म में ही सत्य की प्रतिष्ठा है। पिता जी का यह वचन भी धर्म के आश्रित होने के कारण परम उत्तम है।
राम अपने भ्राता लक्ष्मण से भी कहते हैं-
सोऽहम् न शक्ष्यामि पुनर्नियोगमतिवर्तितुम।।
पितुर्हि वचनात् वीर कैकेय्याहं प्रचोदितः।।
(अयोध्या काण्ड)
वीर, मैं पिता जी की आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता क्योंकि पिता जी के कहने से ही कैकेयी ने मुझे वन में जाने की आज्ञा दी है।
ऐसे थे राम, जिनका जीवन ही वैदिक आचरण वाला था, वेद से ही शिक्षा प्राप्त कर मनुष्य सत्यतः मनुष्य श्रेष्ठ सदाचारी आज्ञाकारी राष्ट्र व माता पिता का भक्त बन सकता है। आज परिवारों में जो चिन्ताजनक स्थिति है, वह वैदिक धर्म व संस्कृति से दूर जाने से ही है। देवी सीता के प्रति राम का प्रेम (पत्निव्रतः) जब राम वन को जाने लगे तब सीता ने भी साथ चलने का आग्रह किया तब राम ने कहा-
न देवि वत दुःखेन स्वर्गप्याभिरोचते।
नहिमेऽस्ति भयं किञ्चित् शम्भोरिव सर्वतः।। *(अयो. का)*
अर्थात् सीते! पिता की सेवा करना कल्याण की प्राप्ति का

जैसा साधन माना गया है। वैसा न सत्य है, न दान है, न मान है, न पर्याप्त दक्षिणा वाले यज्ञ हैं।

राम का भ्रातृ-प्रेम :

राम ने लक्ष्मण को वन जाने से मना किया क्योंकि लक्ष्मण राम के साथ वन जाने का आग्रह कर रहे थे इस पर राम ने कहा-

स्निग्धो धर्मरतो धीरः सततं सत्पथे स्थितः।
प्रियः प्राण समो वश्यो विजेयश्च सखा च मे।।

लक्ष्मण तुम मेरे स्नेही, धर्मपरायण, धीर-वीर तथा सन्मार्ग में स्थित रहने वाले हो। मुझे प्राणों के समान प्रिय हो तथा मेरे वश में रहने वाले आज्ञापालक और सखा हो। राम भाइयों से अत्यधिक स्नेह करते थे। वनवास होने पर भी भाइयों के प्रति उनके विचार व भाव में कोई परिवर्तन नहीं आया। भरत ने अयोध्यावासियों के साथ राम से लौटने का आग्रह किया। विनती की कि राज सिंहासन सँभाल लें। राम के अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहने से भरत ने राम से हाथ जोड़ नम्रता से नेत्रों में अश्रु भर कर कहा-

चतुर्दशे हि सम्पूर्ण वर्षेऽहनि रघुत्तम।
न द्रक्ष्यामि यदि त्वां तु प्रवेक्ष्यामि हुताशनम्।।

अर्थात् रघुकुल शिरोमणे! यदि चौदहवाँ वर्ष पूरा होने पर नूतन वर्ष के प्रथम दिन ही मुझे आपका दर्शन नहीं मिलेगा। तो मैं जलती हुई आग में प्रवेश कर जाऊँगा।

यह भाई-भाई का प्रेम था। एक भाई ने भाई के लिए राज सिंहासन को ठोकर मार वन का रास्ता शिरोधार्य किया। राम ने भरत की इस घोषणा पर बहुत अच्छा कह अपनी स्वीकारोक्ति प्रदान कर दी, परन्तु अयोध्या लौटने को राजी नहीं हुए बड़े आदर के साथ भरत को अपने हृदय से लगा यही बात कही। 'रघुनन्दन मैं तुम्हें अपनी व सीता की शपथ दिला कर कहता हूँ कि माता कैकेयी की रक्षा करना। उनके प्रति कभी क्रोध न करना।

यह कह कर राम के नेत्रों में अश्रु उमड़ आए।

प्रजा वत्सल राम

राम का प्रजा के प्रति अत्यधिक लगाव था, प्रजा भी राम को

अत्यधिक चाहती थी, प्रजा को भ्रातृवत् व पुत्रवत् समझते थे। जब राम वन को जाने लगे तो अयोध्यावासी नर-नारी भी उनके साथ वन जाने व वन में उनके साथ रहने को उद्यत होने लगे।

अनुरक्ता महात्मानं रामं सत्य पराक्रमम्।
अनुजग्मुः प्रयान्तं तं वनवासाय मानवाः।।

उधर सत्य पराक्रमी महात्मा श्री राम जब वन की ओर जाने लगे उस समय उनके प्रति अनुराग रखने वाले बहुत से अयोध्यावासी वन में निवास करने उनके पीछे-पीछे चल दिए। उन प्रजा जनों ने श्री राम से घर लौट चलने के लिये बहुत प्रार्थना की, किन्तु वे पिता के सत्य की रक्षा करने के लिए वन की ओर बढ़ गए।

जब प्रजा जनों से विदाई लेने लगे तो नेत्रों में अश्रुपूरित हो कहा- अयोध्यावासियो! मेरे प्रति जो प्रेम और आदर है, वह मेरी ही प्रसन्नता के लिए भरत के प्रति और अधिक रूप से होना चाहिए। महात्मा राम के आदर्श भारतीय समाज के लिए आचरण करने योग्य हैं। हमें उनके जीवन से शिक्षा लेनी चाहिए। पिता-पुत्र, माता-पिता व बड़ों के प्रति समर्पित आज्ञाकारी होना चाहिए और माता-पिता भी सत्य सनातन वैदिक धर्म के ही अनुयायी हों। जैसा कि अपने माता-पिता के लिए श्रद्धावान, निष्ठावान, प्रेमी आज्ञाकारी होवें, ऐसे ही राष्ट्र के प्रति भी समर्पित होवें, अपने धर्म व संस्कृति का पालन करें क्योंकि भारत जैसी धर्म व संस्कृति एवं वर्ण व समाज की व्यवस्था संसार में अन्यत्र नहीं है। हमारे देश में विशेष भावना है जिससे हम राष्ट्र को 'भारत माता' कहते व 'वन्दे मातरम्' का उद्घोष करते हैं। अन्य देशों में ऐसा प्यार देखने को नहीं मिलता। महात्मा राम की प्रजा भाई, पत्नी, राष्ट्र, माता-पिता व ऋषियों एवं मित्र आदि सबके लिए विशेष रूप से वैदिक मर्यादाएँ थीं जिनका शतशः उन्होंने पालन किया। आज भी हमें राम के आदर्शों से शिक्षा लें और उसे जीवन में ढालने का प्रयत्न करना चाहिए।

चन्द्रलोक कालोनी, खुर्जा,
बुलन्दशहर, उ.प्र.

बाबर : तुलसी की दृष्टि में (तुलसी दोहा शतक)

प्रत्येक दोहे का अर्थ उनके नीचे दिया गया है

1. मन्त्र उपनिषद ब्राह्मनहुँ बहु पुरान इतिहास।
   जवन जराये रोष भरि करि तुलसी परिहास।।

श्री तुलसीदास जी कहते हैं कि क्रोध से ओतप्रोत यवनों ने बहुत सारे मन्त्र (संहिता), उपनिषद, ब्रह्मणग्रन्थों (जो वेद के अंग होते हैं) तथा पुराण और इतिहास सम्बन्धी ग्रन्थों का उपहास करते हुए उन्हें जला दिया।

2. सिखा सूत्र से हीन करि बल ते हिन्दू लोग।
   भमरि भगाये देश ते तुलसी कठिन कुजोग।।

श्री तुलसीदास जी कहते हैं कि ताकत से हिंदुओं की शिखा (चोटी) और योग्योपवीत से रहित करके उनको गृहविहीन कर अपने पैतृक देश से भगा दिया।

3. बाबर बर्बर आइके कर लीन्हे करवाल।
   हने पचारि जन तुलसी काल कराल।।

श्री तुलसीदास जी कहते हैं कि हाथ में तलवार लिये हुए बर्बर बाबर आया और लोगों को ललकार कर हत्या की। यह समय अत्यन्त भीषण था।

4. सम्बत सर वसु बान नभ ग्रीष्म ऋतु अनुमानि।
   तुलसी अवधहिं जड़ जवन अनरथ किये अनखानि।।

इस दोहा में ज्योतिषीय काल गणना में अंक दायें से बाईं ओर लिखे जाते थे, सर (शर) =5, वसु =8, बान (वाण) =5 श्री तुलसीदास जी कहते हैं कि सम्वत् 1585 विक्रमी (सन 1528ई) अनुमानतः ग्रीष्मकाल में जड़ यवनों अवध में वर्णनातीत अनर्थ किये।(वर्णन न करने योग्य)।

5. राम जनम महि मंदरहिं, तोरि मसीत बनाय।
   जवहिं बहुत हिन्दू हते, तुलसी कीन्ही हाय।।

जन्मभूमि का मन्दिर नष्ट करके, उन्होंने एक मस्जिद बनाई। साथ ही तेज गति उन्होंने बहुत से हिन्दुओं की हत्या की। इसे सोचकर तुलसीदास शोकाकुल हुए।

6. दल्यो मीराबाकी अवध मन्दिर रामसमाज।
   जवहिं बहुत हिन्दू हते, तुलसी कीन्ही हाय।।

मीर बाकी ने मन्दिर तथा रामसमाज (राम दरबार की मूर्तियों) को नष्ट किया। राम से रक्षा की याचना करते हुए विदीर्ण हृदय तुलसी रोये।

7. राम जन्म मन्दिर जहाँ तसत अवध के बीच।
   तुलसी रची मसीत तहँ मीर बाकी खाल नीच।।

तुलसीदास जी कहते हैं कि अयोध्या के मध्य जहाँ राममन्दिर था वहाँ नीच मीर बाकी ने मस्जिद बनाई।

8. रामायण घरि घट जँह, श्रुति पुरान उपखान।
   तुलसी जवन अजान तँह, कइयों कुरान अज़ान।।

श्री तुलसीदास जी कहते हैं कि जहाँ रामायण, श्रुति, वेद, पुराण से सम्बन्धि प्रवचन होते थे, घण्टे घड़ियाल बजे थे, वहाँ अज्ञानी यवनों की कुरआन आज़ान होने लगे।

राम ने बिना विचलित हुए जीवन के कठिन क्षणों का सामना किया

–सद्गुरु जग्गी वासुदेव

श्रीराम के जीवन पर गौर करें तो पाएँगे कि उनके सामने मुसीबतों का एक अंतहीन सिलसिला था। सबसे पहले उन्हें राजपाट छोड़ना पड़ा। उसके बाद 14 साल वनवास झेलना पड़ा। राम का महत्व इसलिए नहीं है कि उन्होंने जीवन में इतनी मुश्किलें झेलीं, बल्कि इसलिए है कि उन्होंने उन तमाम मुश्किलों का सामना बहुत शिष्टता के साथ किया। उनकी पत्नी का अपहरण कर लिया गया। उसे छुड़ाने के लिए उन्हें अपनी इच्छा के खिलाफ भयानक युद्ध में उतरना पड़ा। जब वह पत्नी को लेकर अपने राज्य लौटे तो उन्हें आलोचना सुनने को मिली। इस पर उन्हें अपनी माँ बनने वाली पत्नी को छोड़ना पड़ा। फिर उन्हें जाने-अनजाने अपने ही बच्चों के खिलाफ लड़ाई लड़नी पड़ी। अंत में वह हमेशा के लिए अपनी पत्नी से जुदा हो गए। राम में यह देखने की क्षमता थी कि जीवन में बाहरी परिस्थितियाँ कभी भी बिगड़ सकती है। इसीलिए अपने सबसे मुश्किल क्षणों में भी उन्होंने खुद को गरिमापूर्ण बनाए रखा।

आप सोचते हैं कि मेरे साथ ये सब नहीं होगा, तो यह मूर्खता है। जीने का विवेकपूर्ण तरीका यही होगा कि आप सोचें, 'अगर मेरे साथ ऐसा होता है तो मैं इसे शिष्टता से ही निपटूँगा।' भगवान राम ऐसी परिस्थितियों में भी न तो क्रोधित हुए, न उन्होंने किसी को कोसा और न ही घबराए या उत्तेजित हुए। हर स्थिति को उन्होंने बहुत ही मर्यादित तरीके से सँभाला। इसलिए जो लोग मुक्ति और गरिमापूर्ण जीवन की इच्छा रखते हैं, उन्हें राम की शरण लेनी चाहिए।

सवाल यह नहीं है कि आपके पास कितना है, आपने क्या

किया, आपके साथ क्या हुआ और क्या नहीं। असल चीज है- जो भी हुआ, उसके साथ आपने खुद को कैसे संचालित किया। लोगों ने राम को पसंद किया क्योंकि उन्होंने राम के व्यवहार में पाई जाने वाली सूझबूझ को समझा। आध्यात्मिक मार्ग पर चलने वाले अनेक लोगों में अक्सर जीवन में किसी त्रासदी की कामना करने का रिवाज देखा गया है। वे चाहते हैं कि उनके जीवन में कोई ऐसी दुर्घटना हो, ताकि मृत्यु आने से पहले वे अपनी सहने की क्षमता को तौल सकें।

सब कुछ ठीक-ठाक चल रहा है और आपको पता चले कि जिसे आप हकीकत मान रहे हैं, वो आपके हाथों से छूट रहा है तो आपका खुद पर से नियंत्रण छूटने लगता है। इसलिए लोग त्रासदी की कामना करते हैं। राम की पूजा इसलिए नहीं की जाती कि हमारी भौतिक इच्छाएँ पूरी हो जाएँ। राम की पूजा हम उनसे यह प्रेरणा लेने के लिए करते हैं कि कठिन क्षणों का सामना कैसे धैर्यपूर्वक, बिना विचलित हुए करना चाहिए।

यावत्स्वस्थमिदं शरीरमरुजं यावज्जरा दूरतो,
यावच्चेन्द्रियशक्तिरप्रतिहता यावत्क्षयो नायुषः।
आत्मश्रेयसि तावदेव विदुषा कार्यः प्रयत्नो महान्,
संदीप्ते भवने तु कूपखननं प्रत्युद्यमः कीदृशः।।

(भर्तृहरिकृत-वैराग्यशतक, श्लोक-79)

भावार्थ - जब तक यह शरीर स्वस्थ अर्थात् रोगरहित है, जब तक बुढ़ापा दूर है, जब तक सभी इंद्रियों में शक्ति विद्यमान है और आयु बची हुई है, तभी तक बुद्धिमान व्यक्ति को चाहिए कि आत्मकल्याण के लिए महान् पुरुषार्थ करे, अन्यथा जैसे घर में आग लग जाने पर कुआँ खोदने से कोई लाभ नहीं होता वैसे मृत्यु काल में कुछ भी नहीं हो सकेगा।

महान विचारक और समाज सुधारक थे डॉ. आम्बेडकर

आज जब देश उनका 126वां जन्मदिवस मना रहा है बाबासाहब आम्बेडकर के विचार अब पहले से भी ज्यादा प्रासंगिक नजर आते हैं। पिछड़े वर्गों के लिए उनके द्वारा किए गए संघर्ष और अधिकारों की बातें वर्तमान में भी उतनी प्रासंगिक हैं:

दुनिया के सबसे बड़े लोकतंत्र के संविधान निर्माण की चुनौती को डॉ. आम्बेडकर, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद और कई दूसरे लोगों ने बखूबी निभाया था, पर इन सबसे अहम किरदार निभाया था बाबा साहब ने। आज भारतीय संविधान दुनिया का सबसे बड़ा लिखित संविधान है और देश की सभी चुनौतियों और हितों की रक्षा करने में सक्षम है। हमारे संविधान में अगर किसी व्यक्ति की पहचान है तो वह बाबासाहब आम्बेडकर ही हैं। देश की आजादी से अब तक बच्चे, बड़े सभी के बीच उनकी छवि एक ज्ञानी, विधिवेत्ता और संविधान निर्माता की है।

संविधान निर्माण

आम्बेडकर विद्वान और बड़े विधिवेत्ता थे। यही कारण था जब 15 अगस्त 1947 में भारत की स्वतंत्रता के बाद, काँग्रेस के नेतृत्व वाली नई सरकार अस्तित्व में आई तो उसने आम्बेडकर को देश के पहले कानून मंत्री के रूप में सेवा करने के लिए आमंत्रित किया, जिसे उन्होंने स्वीकार कर लिया। 29 अगस्त 1947 को, आम्बेडकर को स्वतंत्र भारत के नए संविधान की रचना के लिए बनी संविधान मसौदा समिति के अध्यक्ष पद पर नियुक्त किया गया। आम्बेडकर ने मसौदा तैयार करने के इस काम में

अपने सहयोगियों और समकालीन प्रेक्षकों की प्रशंसा अर्जित की। इस कार्य में आम्बेडकर का बौद्ध संघ रीतियों और अन्य बौद्ध ग्रंथों का अध्ययन बहुत काम आया।

आम्बेडकर द्वारा तैयार किए गए संविधान पाठ में संवैधानिक गारंटी के साथ व्यक्तिगत नागरिकों को एक व्यापक श्रेणी की नागरिक स्वतंत्रताओं की सुरक्षा प्रदान की जिनमें, धार्मिक स्वतंत्रता, अस्पृश्यता का अंत और सभी प्रकार के भेदभावों को गैर कानूनी करार दिया गया। आम्बेडकर ने महिलाओं के लिए आर्थिक और सामाजिक अधिकारों की वकालत की और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों के लिए सिविल सेवाओं, स्कूलों और कॉलेजो की नौकरियों में आरक्षण प्रणाली शुरू करने के लिए सभा का समर्थन भी हासिल किया। भारत के विधि निर्माताओं ने इस सकारात्मक कार्यवाही के द्वारा दलित वर्गों के लिए सामाजिक और आर्थिक असमानताओं के उन्मूलन और उन्हें हर क्षेत्र में अवसर प्रदान कराने की चेष्टा की। जैसा कि हम सभी जानते हैं कि 26 नवम्बर 1949 को संविधान सभा ने संविधान को अपना लिया और इसकी कुछ बातों को उसी समय से लागू भी कर दिया। वहीं अपना संविधान 26 जनवरी 1950 को पूरी तरह से लागू हुआ।

संविधान की आत्मा

आम्बेडकर साहब की जिंदगी जितनी मुफलिसी में गुजरी, जितनी चुनौतियों का सामना उन्हें करना पड़ा, उतना शायद ही किसी दूसरे राजनेता को उस वक्त करना पड़ा था। फिर भी उन्होंने हर चुनौती का बखूबी सामना

किया। न केवल अपने देश में बल्कि विदेश जाकर अपनी पढ़ाई की। वे एक सफल वकील बने।

उन्हें राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय कानून की गजब की समझ थी। उन्होंने अपने इसी अनुभव को भारत के संविधान निर्माण में इसका प्रयोग किया। सभी के विकास और अधिकार की व्यवस्था उसमें की गई। संविधान में मौलिक अधिकारों, नीति निर्देशक तत्त्वों समेत हर विषय पर व्यवस्था दी गई है, साथ ही वक्त के साथ बदलाव के लिए संविधान संशोधन की व्यवस्था भी है। बाबा साहब लोगों के अधिकारों के प्रति जागरूक थे, वह इस बात से ही पता चलता है कि संविधान का 32वाँ अनुच्छेद जो संवैधानिक उपचारों से संबंधित है, इसे उन्होंने संविधान की आत्मा कहा था। क्योंकि इसी अनुच्छेद के तहत सर्वोच्च न्यायालय रिट जारी करती है और लोगों के मौलिक अधिकारों की रक्षा करती है।

दलितों की उपेक्षा और छुआछूत को देखकर ही उन्होंने दलित वर्ग के लिए राष्ट्रीय स्तर पर आंदोलन चलाया। उन्होंने जातीय व्यवस्था में व्याप्त गलत मान्याताओं को उखाड़ फेंकने के लिए क्रांतिकारी भूमिका निभाई। धर्म के प्रति अपना पक्ष स्पष्ट रूप से रखते हुए उन्होंने कहा था कि "जो धर्म विषमता का समर्थन करता है, उसका हम विरोध करते हैं। अगर हिन्दू धर्म अस्पृश्यता का धर्म है तो उसे समानता का धर्म बनाना चाहिए। हिन्दू धर्म को चातुर्वण्य निर्मूलन की आवश्यकता है। चातुर्वण्य व्यवस्था ही अस्पृश्यता की जननी है। जाति भेद और अस्पृश्यता ही विषमता के रूप हैं। यदि इन्हें जड़ से नष्ट नहीं किया गया तो अस्पृश्य वर्ग इस धर्म को निश्चित रूप से त्याग देगा"।

डॉ. आम्बेडकर दलितों के मसीहा के साथ ही ऐतिहासिक महापुरुष भी हैं। उन्होंने अपने आदर्शों और सिद्धांतों के लिए आजीवन संघर्ष किया जिसका सुखद परिणाम आज हम दलितों में आई हुई जागृति अथवा नवचेतना के रूप में देख रहे हैं।

नारी स्वतंत्रता के समर्थक

अगर महिला स्वतंत्रता के चिंतन की बात करें तो आम्बेडकर एक विश्वस्तरीय चिंतक के रूप में दिखते हैं। परिवार और समाज में स्त्री की स्थिति कैसी हो, इस पर गहन चिंतन किया। पुरुषों के साथ स्त्री को भी समानता व स्वतन्त्रता मिले, उसे सामाजिक आजादी के साथ आर्थिक आजादी भी प्राप्त हो, परिवार में उसका दर्जा पुरुष के समान हो, इसके लिए उन्होंने दलित, गैर-दलित स्त्रियों को समाज परिवर्तन के आन्दोलन में जोड़ने की भरपूर कोशिश की।

घर और समाज में नारी की हीनतर स्थिति को देखकर उन्होंने इस विषय पर खूब सोचा कि भारतीय स्त्री की स्थिति में क्रांतिकारी परिवर्तन कैसे आए। यह क्रांतिकारी परिवर्तन परिवार तथा समाज में नारी को विशेषाधिकार देकर ही किया जा सकता था। बाबा साहब इस बात का पूरा समर्थन करते थे कि महिलाओं की उन्नति के बिना समाज की उन्नति नहीं हो सकती। और इन दोनों की उन्नति शिक्षा के बिना नहीं हो सकती।

सभी के थे आम्बेडकर

बाबा साहब भीमराव अम्बेडकर को किसी एक जाति से जोड़कर देखनो सही नहीं होगा। उन्होंने सभी जरूरतमंदों और पिछड़ों के अधिकारों की बात की थी।

भीमराव आम्बेडकर की 126वीं जयन्ती (14 अप्रैल)

–आई.डी.गुलाटी

आपने कहा था कि–

"सारी दुनिया की कितनी ही दौलत क्यों न मिले तो भी मैं इस्लाम या ईसाई मत स्वीकार नहीं करूँगा।"

"यह एक भयानक सत्य है कि ईसाई–मुस्लिम बनने से वे अराष्ट्रीय हो जाते हैं। साथ ही यह भी तथ्य है कि ईसाइयत–इस्लाम, मतान्तरण के बाद भी जातिवाद नहीं मिटा सकते हैं।"

"मतान्तरण समाज के लिए एक अभिशाप है।"

यह भी सत्य है कि–

1. निज़ाम हैदराबाद ने डॉ. अम्बेडकर को एक करोड़ रुपये (वर्तमान मूल्य रु. 200 करोड़) लेकर मुस्लिम धर्म स्वीकार करने का प्रस्ताव रखा था जिसे भारतरत्न–सावरकरवादी सोच के डॉ. अम्बेडकर ने अस्वीकार कर दिया था।

2. आपने संविधान बनाकर देते समय स्पष्ट रूप से कहा था कि यह संविधान उनकी सोच–चिन्तन तथा मानसिकता के अनुरूप नहीं है बल्कि उनसे ऐसा संविधान बनवाया गया है।

अपील

धर्म बदलने के बाद जिन्हें दलित ईसाई और दलित मुस्लिम का दर्जा मिला है और उनके साथ समानता का व्यवहार नहीं हो रहा है। उनसे अनुरोध किया जाता है कि वे अपने घर लौट आएँ। वे आर्यसमाज के सदस्य बनकर वैदिक धर्मी बनें। उन्हें वेद पढ़ने का पूरा अधिकार है। आर्यसमाज में जातिवाद नहीं हैं। उन्हें पूरा सम्मान मिलेगा। वे आर्यसमाजों के साप्ताहिक हवन व सत्संग में आकर तो देखें।

भारतीय हिन्दू–शुद्धि सभा,

बुलन्दशहर–203001

चुनावी माहौल और ऐडवरटाइजिंग

-प्रसून जोशी

आजक़ल माहौल चुनावी है। हर तरफ चुनावी राजनीति की बात हो रही है। हर राजनीतिक पार्टी अपनी तरह से लोगों को लुभाने की कोशिश में लगी है और इसके लिए हर मुमकिन कदम उठा रही है। तमाम पार्टियाँ इसके लिए विज्ञापनों का भी सहारा लेती रही हैं और ले रही हैं। लेकिन मेरा ऐसा मानना है कि किसी प्रॉडक्ट या एफएफसीजी के लिए जो ऐडवरटाइजिंग होती है उससे राजनीतिक दलों की एडवरटाइजिंग पूरी तरह से अलग है। ऐडवरटाइजिंग का अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग रोल होता है।

अगर आप किसी प्रॉडक्ट की बात कर रहे हैं, मान लीजिए कि किसी सॉफ्ट ड्रिंक की बात कर रहे हैं तो उस सोफ्ट ड्रिंक के पास अपनी कोई जुबान नहीं होती। वह स्वाद के जरिये तो अपनी खूबियाँ बता सकता है लेकिन बोलकर अपने बारे मे कहने की उसके पास कोई गुंजाइश नहीं होती। ऐसे में ऐडवरटाइजिंग के जरिये उस प्रोडक्ट के बारे में लोगों को जमकर बताया जाता है और खूब बढ़ाचढ़ाकर बताया जाता है। कई बार तो लोग ऐड में बताई गई खूबियों के आधार पर ही उस प्रॉडक्ट को खरीद लेते हैं लेकिन राजनीतिक दलों के मामले में ऐसा संभव नहीं हैं। उनके प्रचार के लिए बनने वाले विज्ञापनों को इस तरह नहीं बनाया जा सकता, क्योंकि राजनीतिक दलों के लोग पहले से ही अपने बारे में बोल रहे होते हैं जिससे जनता के मन में उनकी एक खास तरह की इमेज बन चुकी होती है। एक तरह से देखें तो वे खुद ही अपनी ऐडवरटाइजिंग कर रहे होते हैं। वैसे भी जो व्यक्ति बोल रहा है, कहीं न कहीं उसका विज्ञापन अपने आप हो रहा है। ऐसे में विज्ञापन का महत्त्व बस इतना रह जाता है कि उस दल की जो इमेज पहले से बनी हुई है, उसमें वह एक और आयाम जोड़ दे। ऐसे विज्ञापनों में आमतौर पर बातों को बढ़ा-चढ़ाकर पेश नहीं किया जाता, क्योंकि लोगों को इतना ज्यादा बढ़ाकर बोलना हजम नहीं होता और ऐड लोगों के ऊपर अपना प्रभाव नहीं छोड़ पाता। नेताओं के बारे में होने वाली ऐडवरटाइजिंग बस पहले से मौजूद चीजों को

याद दिला देती है। वह एक रिमाइंडर का काम कर सकती हैं। समस्या एक और भी है। अगर लोग किसी खास राजनीतिक दल की विचारधारा के साथ नहीं है तो कितना भी अच्छा ऐड बना लें, उन पर कोई असर नहीं होगा। ऐड का असर उन लोगों पर ही होता है, जिनकी विचारधारा पहले से किसी खास दल से मिलती है।

विज्ञापन बनाने वालों को भी इस बात का पूरा ध्यान रखना पड़ता है कि उनका अंदाज-ए-बयाँ ऐसा न हो जाए, जो मूल रूप से पार्टी की विचारधारा के साथ मेल ही न खाता हो। पार्टी की जो पोस्चरिंग है, उसके साथ आपके विज्ञापन का मेल खाना जरूरी है। विज्ञापन ऐसा हो जो देखने वालों के मानस पटल पर अंकित हो जाए। उदाहरण के तौर पर हम ओबामा की बात करते हैं। उनके चुनाव लड़ने के दौरान उनकी काफी एडवरटाइजिंग हुई, लेकिन अगर ओबामा अमेरिका को स्वीकार्य न होते तो उनके लिए की गई एडवरटाइजिंग खोखली साबित होती। राजनीतिक दलों के मामले में विज्ञापन का काम बस इतना होना चाहिए कि वह सत्य को मुखरित करे, उसे परिवर्तित करने की कोशिश न करे।

विज्ञापनों की दुनिया में रचनात्मकता का भी अहम रोल होता है। कल्पना भी इसमें मायने रखती है और अतिशयोक्ति अलंकार का भी प्रयोग इमसें खूब किया जाता है। लेकिन किसी प्रॉडक्ट और राजनीतिक दल की एडवरटाइजिंग में बस यही फर्क है कि राजनीतिक दल के लिए विज्ञापन बनाते वक्त रचनात्मकता की गुंजाइश थोड़ी कम हो जाती है, क्योंकि यहाँ आप चीजों को बढ़ा चढ़ाकर नहीं कह सकते, कल्पना की लम्बी उड़ान नहीं भर सकते। कई बार लोग राजनीतिक दलों के विज्ञापनों का सहारा लेने को गलत और अनैतिक मानते हैं, लेकिन मुझे इसमें कोई बुराई नजर नहीं आती। जिस तरह किसी कंपनी को अपने प्रोडक्ट के बारे में लोगों को पूरी रचनात्मकता के साथ बताने का हक है, उसी तरह राजनीतिक दलों को भी यह हक है कि वे अपनी इमेज के बारे में, अपने गुणों के बारे में और अपने मुद्दों के बारे में आम जनता को सूचित करें। इसके लिए जरूरी है कि वे विज्ञापनों का सहारा लें, लेकिन ध्यान रखें कि मर्यादा भंग न हो।

VIVEKANANDA, A SPIRITUAL BILLIONAIRE
(12.01.1863 - 04.07.1902)

-Anshul Chaturvedi

It's bad for a preacher to be young, don't you think so? I do, as I did all my life. People have more confidence in an old man, and it looks more venerable." Swami Vivekananda wrote that in one of his letters, towards the closing years of his brief life. Earlier, in 1897, when he was all of 34, he wrote: "I feel my task is done-at most three or four years of life are left." He died five years later, in 1902, aged 39.

Today is the 156th birth anniversary of the monk. Why are we still talking about him? Have we seen anyone since him who could have the impact he had at his age? I often hear him being described as a youth icon, for a variety of reasons. For me, though, Vivenanda's message to youth was not in what he said, but in how he lived, and the age at which he lived it.

The easy familiarity of the 'four stages' of life model in Indian tradition makes many of us assume that understanding issues relevant to life and death is something left for the post-retirement stage. Vivekananda knew better. Though he taught a lot through what he said and wrote, what he taught by how he lived was that where life, death and faith are concerned, it's never too early to learn, to master, and to have enough to give back.

We respect the young billionaries of Silicon Valley who complete the cycle of starting early, making it big, and then giving it back. Billionaires are made and unmade with every Forbes list. They wil have their mansions and their helicopters but not too many would recall them a century after

they're no more. The blazing fervour of a Vivekananda - a spiritual billionaire - comes but once in a lifetime.

It's sometimes asked, is it relevant to understand and embrace profound questions as young as he did? I have a perspective on this: A young traveller will spend a fair amount of time reading up on the weather, customs and currency of a new country he's travelling to, and think it to be a matter of common sense. But ask him to read up on anything relating to where he's finally going to travel to - and he may often say, I'll come to all that later: It's almost like beginning to read about your destination only after you're in the airport lounge. In this case, however, you have no clue when the flight will take off!

You may have mastered philosophy, you may have mastered literature, or any subject of your choice, but until you've masterd life and death, you've not really mastered anything. Vivekananda-a man with the courage to say, "Death I have conquered long ago when I gave up life. My only anxiety is the work"-wasn't a Master of Science or Engineering or Arts: but he was a Master of Life. He lived the fact that it's never too early to begin to understand and comprehend the spirit. He reminded us that wisdom is not necessary the preserve of ripe old age. Vivekananda used his youth, the only time he had in life, to study and master life and death-which is why, to me, he remains the definitive youth icon, one who practised his philosophy in his youth, not just preached to the youth.

Yes, it's good to have fun, but, as the Master wrote to a young friend, "Eating, drinking, dressing and society nonsense are not things to throw a life upon." There's more.

(FORM IV) STATEMENT ABOUT OWNERSHIP AND OTHER PARTICULARS ABOUT "BRAHMARPAN"

Place of Publication and Address	:	New Delhi, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-110058.
Periodicity	:	Monthly, A bi-lingual publication (Hindi and English)
Printers' name, citizenship and Address	:	B.D. Ukhul, Indian, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-110058.
Publishers' name, citizenship and Address	:	B.D. Ukhul, Indian, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-1100058.
Editor's name, citizenship and Address	:	Dr. Bharat Bhushan Vidyalankar, Indian, C2A/90, Janakpuri, New Delhi-110058.
Name and Address of Owner	:	M/s. Brahmasha India Vedic Research Foundation, C2A/58, Janakpuri, New Delhi-110058.
Printing Press	:	Friends Printofast , 6, A5B/A5C Market, Janakpuri, New Delhi-110058.
DCP License No.	:	F2(B-39) Press/2007

I, B.D.Ukhul, hereby declare that the particulars given above are true to the best of my knowledge and belief.

31.03.2019 Sd/- B.D.Ukhul

BRAHMASHA INDIA VEDIC RESEARCH FOUNDATION ACKNOWLEDGES WITH THANKS RECEIPT OF THE FOLLOWING DONATIONS:-

1. Shri M.L. Kalra, A2/157, Janakpuri, New Delhi-58 Rs. 600/-
2. Shri. Satish Chawla, C2B/27A, Janakpuri, New Dehi-58 Rs. 1100/-

Donations to the Foundation are eligible for Tax Exemption under Section 80G of the Income Tax Act 1960 Vide No.DIT(E)1/3313/DELBE 21670-2503210 dated 25.03.2010

राम नवमी एवं विक्रमी संवत् 2076 की
हार्दिक शुभकामनाएँ

Date of Pubn. : 31.3.2019 Posted at - NIE-H.O. Postal Date : 2-3 April 2019
RNI Reg. No. DELBIL/2007/22062 Postal Regd. No. DL(W) 10/2143/2017-2019

कदा चन स्तरीरसि नेन्द्र सश्चसि दाशुषे।
उपोपेन्नु मघवन्भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते।।

सामः 300

ऋषिः- मेध्यातिथिः, देवता-इन्द्रः, छन्दः-बृहती

हे सारे सांर के धन और सम्मान के स्वामी, तुम उस आराधक के लिए, जो दूसरों के हित में कार्य कर रहा है, कभी भी फलहीन नहीं, हो सकते। जैसे-जैसे वह आराधक दूसरों के हित में कार्य करता रहता है वैसे-वैसे वह उस ईश्वर के समीप होता जाता है।

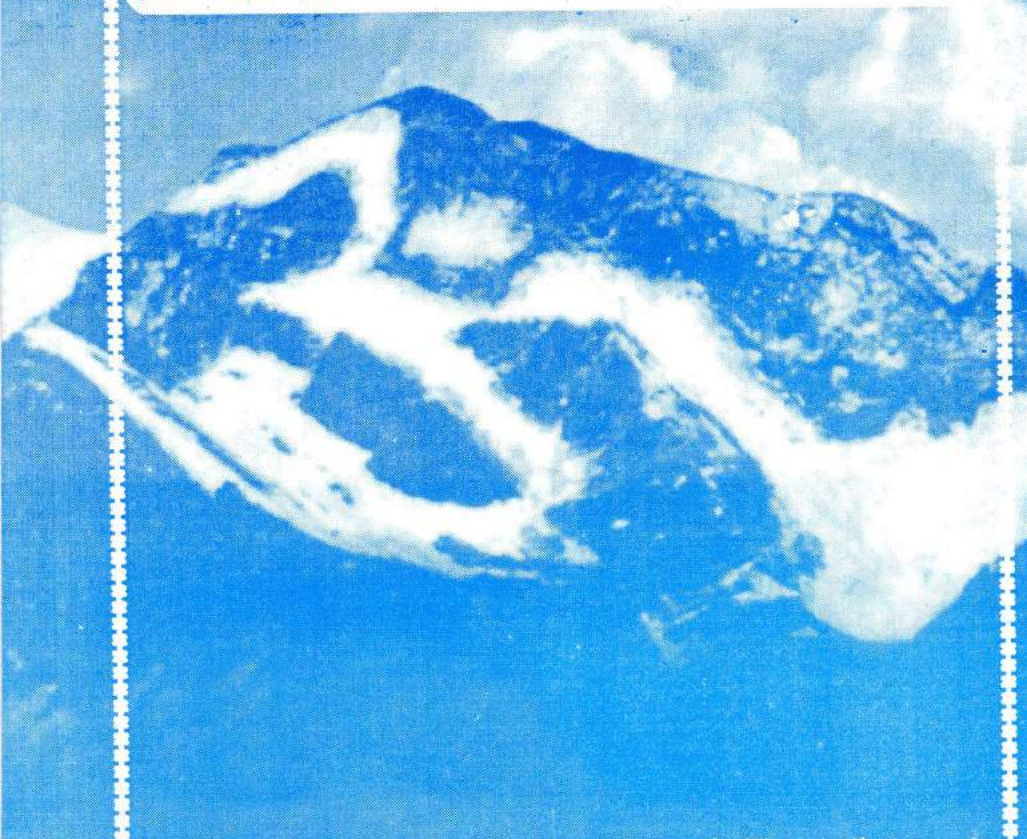

O Lord of wealth and honour you are never fruitless to the person who is working in the interest of others. You become more closer and closer to such devotee on his charitable dispositions.

Printed by - Friendsprintofast, New Delhi-58